Reviews of Literature
Volume 1 , Issue 6 / Jan 2014 ISSN:-2347-2723

सम्बद्व दषक की उपन्यास यात्रा

सुनिता क्षीरसागर

असिस्टंट प्रोफेसर, एस. के. सोमया महाविद्यालय

सारांष :

हमारी संस्कृति में वसुवैध कुटुंबकम वर्षो से रचा–बसा है पर जिस साज–सज्जा से वैश्वीकरण या भूमंडलीकरण ने खुद को प्रस्तुत किया है उससे ही प्रभावित मुखर हो बोल पडे, ' कर लो दुनिया मुट्ठी में', कल तक नौकरी के लिए की जानेवाली विदेश यात्रा कब शॉपिंग और भ्रमण के रूप में परिवर्तित हो गची इसकी खबर भी न हुई । यह विभिन्न देशों के जनमानस को भी ज्ञात नहीं है ।

प्रस्तावना :-

वैश्वीकरण का यह दौर प्रत्येक राष्ट्र के शक्ति परीक्षण का है जिसमें अभिव्यक्तियॉ अपनी महत्वपूर्ण भूमिकाऍ निभाऍगी तथा जिस राष्ट्र का संप्रेषण जितना प्रखर और परिस्थितिजन्य होगा वह बाजी उतनी ही सुगम तौर पर उस देश के हाथ होगी ।

साहित्य वह जगह है जहॉ वर्तमान का सच ही नहीं कहा जाता वरन जो कल का सपना है वह भी बुना जाता है । इस तरह हम जो सपना देखते है वह भी सच का बडा हिस्सा ही होता है । पिछले तीन दशक की रचनात्मक जमीन पर खडे होकर उसका अवलोकन करते हुए हम रचना में संभावनाओं की टोह लेते हैं सर्जक भविष्य में छलांग लगाता है । वह स्वयं नहीं जानता कि वह कल नया क्या रचेगा । प्रेमचंद ने 'सेवासदन' और 'प्रेमाश्रम' भी लिखते समय यह नहीं सोचा होगा कि 1936 तक पहुॅचते– पहुॅचते वे 'गोदान' भी लिखेंगे । जो रचनाकार जिस समय में होता है, अपने समय की चुनौतियॉ से ऑखे चुराकार रचना नहीं कर सकता । उसे नकारात्मक मूल्यो को या तो स्वीकार करना होगा या अस्वीकार । यह आकस्मित नहीं था कि प्रेमचंद जी ने महाजनी सभ्यता पर सबसे तीखा प्रहार किया था । इक्कीसवीं सदी का रचनाकार अंतरराष्ट्रीय महाजनी प्रवृत्ति का शिकार हो रहा है उसी के दबाव में हमारे समाज में रहन–सहन, सोच–विचार में तेजी से बदलाव हो रहा है । इन्हीं बनती बिगडती परिस्थितियों के घात–प्रतिघात तले जीवन की विवशताओं और प्रतिरोध ही उपन्यास का मुख्य स्वर होगा ।

रचनाकार के लिए जीवन की वास्ताविकता बडी चीज है । वह उसे समाज जीवनानुभवों, विभिन्न भेंदों – प्रभेदों के द्वारा संवेदना के स्तर पर ग्रहण करता है । वहीं साहित्य में मानव और मानव समाज का प्रामाणिक दस्तावेज होता है । वह सोचता है कि काश, ऐसा होता तो कैसा होगा । आज के उत्तर आधुनिक युग में वैसे नया कुछ भी नही है । क्योंकी चीजें बहुत तेजी से पुरानी होती जाती हैं । इसका सूत्र है विचारों के बाजार में सर्वश्रेष्ठ विचार जीतता है । यह मंडी द्वारा नियोजित है । इक्कीसवी सदी में

उपभोक्तावादी संस्कृति में जन्मा बाजारू मूल्य भी सर्वशक्तिमान है । आज की लढाई आर्थिक है । अब मूल्यों की राजनीति नहीं मूल्यों का कारोबार होता है । इसी में मूल्यहीनता का शिकार रचनाकार मूल्यहीनता के विरूदध संघर्ष करेगा ।

आज लेखन में कुछ अजीब देखना, बने–बनाए ढॉवे से अलग सोचना आज की मांग है । उपन्यास में एक प्रकार से पैराडाइम शिफ्ट हो रहा है । अब एजेंडा तय करने का काम हाशिए का समाज कर रहा है । इसलिए लोकविमर्श के उपन्यास लिखे जाऍगे । आज की रचना का जो नजरिया है उसके मद्देनजर कहा जा सकता है कि भविष्य में दलितों, स्त्रियों, विकास की दौड में पीछे छूट गए आदिवासियों, असमानता के शिकार समाज के अनेकानेक तबकों, आज की बाजारवादी ताकत तथा उसके पीछे छिपी साम्राज्यवादी आकांक्षा, फासीवादी, आतंकवाद, अलगाववाद (भीतरी तथा बाहरी दोनों) उपन्यास का विषय बनेंगे । इनकी मुकम्मल तस्वींरे और समाधान की कोशिशें अभी समग्रता में न आकर खंड–खंड रूप में आ रही हैं । यही भविष्य का सच होगा और सच को जानने का प्रयास कभी असुंदर नहीं होता । आज उत्तर आधुनिकता की चपेट में शायद 'युटोपिया' भी सुरक्षित नहीं है क्योंकी इसका सिध्दांत ही डवकमतद उपेपवद पे जवजमसल पिसनतमण्

21 वीं शती में भूमंडलीकरण को आत्मसात किए हुए हिन्दी उपन्यास जो संकेत छोड रहे हैं, वे यह करते हैं कि भविष्य के उपन्यास और तीखे तथा तल्ख सवाल खडे करेंगे और प्रश्न उठाएगें । उनका समाधान समाज को ढूँढना होगा । मिलन कुंदेरा ने लिखा था – ''मनुष्य जब तक प्रश्न पूछने की हिम्मत रखेगा तब तक उपन्यास बचा रहेगा ।'' उपन्यास प्रश्नाकुलता का परिसर है । एक साक्षेदारी की स्वायत्तता है । प्रेमचंद बृहत्तर सामाजिक चितांओं को केन्द्र में रखकर चल रहे थे जो जैनेन्द्र नैतिक प्रश्नों में उलझे थें । अज्ञेय व्यक्ति की खोज कर रहे थे । शेखर का जीवन वैयक्तिक चेतना का चरम है । शेखर अपने परिवार में ही रहकर अपने विवेक, अपनी बुध्दि, चेतना तथा अपने अनेभव के आधार जर निर्णय लेने वाला व्यक्ति बन जाता है । जबकि एकांत और अकेलेपन में अंतर होता है । विनोद कुमार शुक्ल के उपन्यास 'दिवार में खिडकी रहती थी' का अलगाव और अकेलेपन भारतीय है जो मनुष्य की नियति है । अज्ञेय की चिंता थी कि व्यक्ति अपने आप को कैसे रचे ? नागार्जुन आचंलिक तेवर को लेकर सामने आते हैं तो रेणु तथा कृष्णा सोबती इसे विस्तृत फलक प्रदान करते हैं । यहॉ आचंलिकता ही नई परंपरा है । हजारी प्रसाद द्विवेदी पौराणिक दार्शनिकता को आधुनिकता के साथ एकमेव कर देते है । मनोहर श्याम जोशी उसे उत्तरआधुनिकता तक ले जाते है ।

इक्कीसवी सदी के उपन्यास में निश्चित तौर पर अनुभव का विस्फोट तथा अभिव्यक्ति उपन्यास को और भी समर्थ और पठनीय बनाए है, बनाएगा ।

भूमंडलीयता में संस्कृति एक उद्योग है, उत्पाद है ब्रांड है । अलका सरावगी, अपने रचनाओं के माध्यम से कहती है, भूमंडलीकरण में प्राचीन परंपरा युक्त सभी निश्चित जमे–जमाए संबंध संस्कार और विचार झाड बुहार दिए जाते हैं, बननेवाले संबंध स्थिर होने से पहले ही पुराने पड जाते हैं । वह सब कुछ जो ठोस है, हवा में उड जाता है, हर पवित्र चीज कलंकित होती है और अंततः मनुष्य पहली बार गंभीरता से अपने जीवन की वास्तविक दशा जान पाता है और अन्य मनुष्यों से अपने संबंधों की सक्षमता में होता है । यह है संस्कृति और भूमंडलीकरण का नाता । उपन्यास, 'कलिकथा : वाया बाइपास' में अलका सरावगी बताती हैं भूमंडलीकरण के बाजार की हर चीज युवा वर्ग को कैसे आकर्षित करती है और बुजुर्ग वर्ग को यह कतई पसंद नहीं जिससे परिवारों में विघटन रिश्तों में दरार पडती है । लेकीन भूमंडलीकरण हर एक

को आकर्षित करता है । जैसे 'एक ब्रेक के बाद उपन्यास में अलका जी बताती हैं भूमंडलीकरण टी. वी. और औरतों का संबध बेजोड है । के. वी. शंकर अय्यर की पत्नी टी. वी. देखने की शौकीन है, जो आजकाल की औरतें टी. वी. द्वारा घर बैठे बिठाए बाजार से जुडी हैं और हर चीज एक फ्री कॉल द्वारा मंगवाती है । के. वी. एक दिन अपनी पत्नी से कहते है, 'हारापिक' के विज्ञापन में अमन वर्मा कलाकार कोमड साफ करते दिखता है फिर भी औरते जागृत नहीं होती और उसकी लाइफ स्ट्रगल ही है । लेकीन रामदेव बाबा बैठे – बैठे कसरत कर प्रवचन में कहते हैं को–का–कोला, पेप्सी से कोमड साफ करो जिससे दो फायदे हैं आपकी साफ सफाई होगी साथ ही कोक–पेप्सी से माएँ कोमड साफ करती हैं देख बच्चे इन्हें पीना छोड देंगे ।

हिन्दी भाषा तेजी से बदल रही है । इसका कारण हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हो रहा तेज बदलाव है । अलका सरावगी अपने 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में पुरूष चरित्र के. वी. के द्वारा बताती हैं, यह हिन्दी भाषा या अन्य भाषाओं में होत है बदलाव खुले बाजार की व्यवस्था द्वारा अद्‌भूत प्रतिक्रियाओं का फल है । साथ ही यह बदलाव नए सूचना–वातावरण, मीडिया विस्फोट और जीवनशैली के बदलाव का परिणाम है यही नहीं अब बदलती हुई भाषा उलटकर जीवन शैली का तेजी से बदल रही है । भाषाओं के बदलने में व्यवसाय और बाजार की हमेशा निर्णायक भूमिका रही है । भाषा बरतने के दौरान ही बदलती है । यूँ तो भाषा हर वक्त बदलती है, लेकीन बाजार की शक्तियॉ उसे कभी–कभी तेजी से बदलती हैं ।

उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' के सभी पात्र कॉरपोरेट दुनिया से जुडे हुए है अर्थात उपभोक्तावाद, बाजारीकरण, भूमंडलीकरण क्या है उसके फायदे नुकसान से ज्ञात है इसलिए एक व्यावसायिक विचार–विमर्श में के. वी. कहते हैं, 'हिन्दी की चिंदी' हो रही है । कारण हिन्दी भाषा के बदलने का एक बडा कारण बाजार की शक्तियॉ और इसमें उपभोक्तावादी शक्तियॉ हैं जिन्होंन पिछले पॉच – सात वर्षो के बीच हिन्दी के भीतर एक उपभाषा (एक लैंग्वेज) पैदा कर डाली है । जिसे लोग 'हिंग्रेजी' कहते हैं । नए संपन्न मध्यवर्ग ने और उसकी देखा–देखी निचले मध्यवर्ग ने इस भाषा को अपनाया हैं और वही बाजार में उपभोक्ता के रूप में तथा उद्योग और सेवा के क्षेत्र में नई रू‍प में मौजूद है ।

ग्रंथ सुचीः

1. आधुनिक हिन्दी – कालजयी साहित्य – अर्जुन चव्हान, वाणी प्रकाशन 2000
2. हिन्दी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना – उषा यादव, लोकभारती प्रकाशन 1990
3. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में परिवर्तित नारी जीवन मूल्य – डॉ, छायादेवी घोरपडे, अमन प्रकाशन, कानपुर 2001
4. उपन्यास समय और संवेदना – विजय बहादुर सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2007
5. शैली और शैली विश्लेषण – डॉ, पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु', वाणी प्रकाशन कानपुर 2000
6. हिन्दी कथा साहित्य का पुर्नपाठ – डॉ. करूणाशंकर उपाध्याय, भास्कर प्रकाशन कानपुर 2002
7. कलि –कथा : वाया बाइपास प्रयोगात्मक संदर्भ, रामगोपाल मीना, नेहा प्रकाशन दिल्ली 2010
8. हिन्दी साहित्य व संवेदना का विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद 2009
9. निराला संचयिता – डॉ. रमेशचंद्र शाह, वाणी प्रकाशन 2001